महावीर युगीन काल

डॉ. एस. एम. पहाड़िया

भगवान महावीर का काल पुनर्जागरण का क्रांतिकारी युग था। पुरानी मान्यताएं गिर रही थीं और नई मान्यताएं, नई चेतना, नये विचार जन्म ले रहे थे। जीवन के हर क्षेत्र में परिवर्तन दृष्टिगोचर हो रहा था।

राजनीति के क्षेत्र में सुसंगठित राज्य बन रहे थे। राजा और उसके कार्यों का महत्व बढ़ रहा था। सामाजिक क्षेत्र में ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा को धक्का लगा था और संयुक्त परिवार प्रथा पनप रही थी। गोत्र और प्रवर के अस्तित्व में आने से नियोग प्रथा का अन्त हो गया था। आर्थिक क्षेत्र में उद्योग व्यापार एवं व्यवसायों में वृद्धि हो रही थी। सिक्कों का प्रचलन बढ़ रहा था और लौह धातु का अधिकाधिक उपयोग होने लगा था। धर्म के क्षेत्र में विश्वव्यापी क्रांति के लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे थे। कला के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई, उत्तर के काले चमकीले पात्र उस युग की विशेषता थी।

राजनीतिक परिस्थितियाँ

उस काल में सोलह बड़े राज्य थे जो "सोलह महाजनपद" नाम से जाने जाते थे। इन राज्यों की निश्चित सीमाएं थी और उनमें राजतन्त्र एवं गणतन्त्र दोनों का समावेश था। छोटे गणतन्त्र स्वतन्त्र या अर्द्ध स्वतन्त्र वंशों, जैसे कपिलवस्तु के शाक्य, देवदाह व रामगाम के कोलिया, सुमसुमारा पहाड़ियों के भग्ग, कलाकप्पा के बुलिस, केशपुट के कालमा एवं पिप्पलीवान के मौर्यों द्वारा शासित थे।

साधारणतया राजा क्षत्रिय होते थे। यद्यपि राजा निरंकुश होता था फिर भी उसे दस राज्य धर्मों का पालन करना पड़ता था। जीवन में नैतिकता का पालन उन दस धर्मों में एक धर्म था। राजा का मुख्य कार्य अपने राज्य की बाहरी और भीतरी संकटों से रक्षा करना था। राजा वंश परंपरागत होता था। राजा का ज्येष्ठपुत्र "उपराजा" कहलाता था तथा सेनापति राजा का संबंधी होता था। राजा की सहायता के लिए एक मंत्री परिषद होती थी जिसमें साधारणतया पांच सदस्य होते थे जो "अमाच्छा" कहलाते थे।

प्रान्तीय शासन लगभग स्वतन्त्र सा ही था। ग्राम शासन में "ग्राम भोजक" का विशेष स्थान था। न्याय के क्षेत्र में राज्य सर्वोपरि था परन्तु न्याय मंत्री उसकी सहायता करता था और वह "विनिच्छायमाच्छा" कहलाता था। सैनिक संगठन अच्छा था। सेना में रथ, हाथी, अश्वारोही एवं पैदल सैनिक होते थे। गणतन्त्र, पश्चिम में स्पार्टा, एथेन्स, रोम और मध्यकालीन वेनिस के गणतन्त्र के समान थे। इनकी शासन व्यवस्था की जानकारी हमें बौद्ध जातकों से प्राप्त होती है। बुद्ध ने मगध के राजा के महामंत्री वर्षकार को जो सात उत्तम बातें बतलाई थीं उन्हें शासन के नीति निर्धारक तत्व माने जा सकते हैं वे इस प्रकार हैं:--

१. समय-समय पर पूरी जन-सभाओं को आमन्त्रित करना
२. मिलजुल कर मिलना, बैठना एवं कार्य करना।
३. स्थापित व्यवस्था के प्रतिकूल नियम नहीं बनाना और प्रचलित नियमों का निरसन नहीं करना।
४. वृद्धजनों का सम्मान, सत्कार करना, उन्हें मान्यता देना एवं उनका भरण पोषण करना।
५. शक्ति द्वारा या अपहरण करके महिलाओं एवं बालिकाओं को बन्द नहीं करना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. चैत्यों को मान्यता देकर उनका सम्मान एवं सहायता करना ।
७. अरहंतों की सुरक्षा एवं बचाव करना तथा उनकी सहायता करना ।

ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय नागरिकता केवल कुलीन क्षत्रियों तक सीमित थी । प्रत्येक गणतन्त्र की अपनी अलग सर्वोच्च जनसभा होती थी जिसे "संथागार" कहते थे। जनसभा में विभिन्न गुट सत्ता के लिये संघर्षरत रहते थे। जनसभा का कार्य गणपूर्ति होने पर प्रारम्भ किया जाता था । जनसभा के प्रस्ताव नियमानुसार ही प्रस्तुत किये जा सकते थे। मतदान कभी गुप्त रूप से, कभी कानाफूंसी से, और कभी प्रत्यक्ष रूप से हुवा करता था । जनसभा कार्यपालिका पर नियन्त्रण रखती थी और उसकी सदस्य संख्या, राज्य की जनसंख्या एवं उनकी परम्परा पर निर्भर करती थी। गणतन्त्रों की न्याय प्रणाली प्रशंसनीय थी एवं नागरिक स्वतन्त्रता की पूर्ण रक्षा की जाती थी । यहां की न्यायपालिका का लक्ष्य "निर्दोषता" का पता लगाना होता था जबकि तिब्बत में 'अपराधी के अपराध' का पता लगाना ।

सामाजिक परिस्थितियाँ

उस काल में क्षत्रियों का समाज में उच्च स्थान था लेकिन बौद्ध साहित्य में इस तथ्य को कहीं-कहीं नकारा है। ब्राह्मणों का प्रभाव घट रहा था और अनेकों ने शिकार, सुथारी और सारथी जैसे हीन समझे जाने वाले धंधों को अपना लिया था। लेकिन ब्राह्मण साहित्य में इसके विपरीत उल्लेख मिलते हैं । वेश्यों के व्यापार में भी एकरूपता नहीं थी । महावीर के पूर्व शूद्रों की स्थिति दयनीय थी, महावीर ने उनकी स्थिति सुधारने का अथक प्रयत्न किया। निम्न मानी जाने वाली जातियों में चाण्डाल, वेण, निशाद, रथकार एवं पुसुक प्रमुख थी। आध्यत्मिक क्षेत्र में अछूतों पर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं था और एक चाण्डाल हरिकेशबल ने साधु धर्म स्वीकार किया था। मिश्रित जातियों का भी इस काल में उदय हुवा ।

उन दिनों मे दास प्रथा प्रचलित थी एवं महावीर की पहली आर्या राजकुमारी चन्दना को भी दासी बनना पड़ा था। सन्यास आश्रम वानप्रस्थाश्रम से बिल्कुल पृथक हो गया था । संयुक्त परिवार प्रथा अब काफी लोकप्रिय हो गई थी और ऐसे परिवारों के सदस्यों के आपसी संबंध मधुर एवं स्नेहपूर्ण थे। कहीं-कहीं आपसी कलह के उदाहरण भी मिलते हैं। वाणिज्य और व्यापार में आशातीत उन्नति होने से परिवार के सदस्यों में स्वतन्त्र रूप से धनोपार्जन की वृत्ति के कारण "संपत्ति के अधिकार" की धारणा बनने लगी।

ऐसा प्रतीत होता है कि उस काल में ब्रह्म, प्रजापत्य, असुर, गंधर्व और राक्षस विवाह पद्धतियाँ प्रचलित थीं। स्वयंबर भी होते थे। विवाह संबंध में गोत्र का महत्व बढ़ने लगा था। भाई-बहिन के आपस में विवाह के उदाहरण मिलते हैं। शाक्यों में बहिनों से विवाह होता है। स्वयंवर भी होते थे। राजकुमारी निववुई इसका उदाहरण है। लिच्छिवियों में नजदीक के संबंधियों में विवाह होते थे । ममेरे भाई-बहिनों में विवाह होते थे। महावीर के बड़े भाई नंदीवर्धन का जेष्ठा के साथ विवाह इसका उदाहरण है । यदाकदा अनुलोम और प्रतिलोम विवाह होते थे। वधू की विवाह के समय उम्र सामान्यतः सोलह वर्ष की होती थी ।

पुरुष अपनी स्त्री की मृत्यु के बाद पुनर्विवाह कर सकता था, परन्तु विधवा विवाह के सम्बन्ध में विरोधी जानकारी मिलती है। किन्हीं विशेष परिस्थितियों में विवाह विच्छेद होने पर स्त्री और पुरुष पुनः विवाह कर सकते थे। एक पत्नी प्रथा साधारणतः प्रचलित थी। धनीवर्ग बहुपत्नियां रखते थे। नगरीय जीवन में गणिकाओं का महत्व था वे संगीत, गान, नृत्य आदि की संरक्षिका होती थी।

साहित्य एवं पुरातत्व दोनों सूत्रों से विशेष कर तेर और नवासा की खुदाई से यह ज्ञात होता है कि गेहूं और दालें खाद्य की मुख्य वस्तुएं थीं। उस काल के खाद्य पदार्थों में सतु, कुमासा, पूवा, खाजा, तिलकूटा तथा दूध एवं दूध की बनी हुई वस्तुएं जैसे दही, मक्खन, घी आदि का प्रचुर मात्रा में उपयोग होता था। तरकारियों में ककड़ी, कद्दू, लोकी आदि और फलों में आम, जामुन आदि लोकप्रिय थे। विविध स्थानों से खुदाई में प्राप्त हड्डियों से प्रतीत होता है कि मांसभक्षण किया जाता था। महावीर मांसाहार के अत्यन्त विरुद्ध थे। उन्होंने शाकाहार का प्रचार कर अनेकों मांसहारियों को शाकाहारी बनाया, शराब का प्रचलन था किन्तु धार्मिक वृत्ति के व्यक्ति इससे परहेज करते थे।

जन साधारण के या पहिनने के वस्त्रों में अन्तरवासक उतरासंग, उसानिसा होते थे । स्त्री और पुरुष दोनों कांचुक धारण करते थे । स्त्रियां साड़ी पहनती थी। रुई, ऊन, सन, ताड़पत्र, रेशम, पटुआ आदि के रेशों के कपड़े बनाये जाते थे। कपड़े को सीने व टांके लगाने का रिवाज था । साधु-साध्वियां तथा विशिष्ट पुरुषों के पहनने के वस्त्र विशेष प्रकार के होते थे। स्त्रियों और पुरुष दोनों सस्ते या मंहगे आभूषण पहिनते थे। आभूषणों में अंगुठियां, कर्णफूल एवं गले के कंठे काफी लोकप्रिय थे । तत्कालीन साहित्य में सौन्दर्य प्रसाधनों एवं श्रृंगार सामग्रियों का प्रचुर विवरण मिलता है । जैन एवं बौद्ध साहित्य में गृह सज्जा के लिये विभिन्न प्रकार की कुर्सियों, पंलगों आदि का विवरण मिलता है । उन दिनों उपयोग में आने वाले मिट्टी एवं धातुओं के बने बर्तन विभिन्न स्थानों से पुरातत्वीय खुदाई में प्राप्त हुवे हैं। उत्तर के काले चमकीले पात्र इस युग की अनोखी देन हैं ।

लोग उत्सवों में सम्मिलित होते थे। इन्हें "समाज्जा" कहते थे। शालभंजिका उत्सव अत्यन्त लोकप्रिय था। अन्य त्यौहारों में कोमुदी और हाथी-मंगल प्रसिद्ध थे। त्यौहारों एवं उत्सवों के अतिरिक्त मनोरंजन के लिये बगीचे में भ्रमण करते थे और संगीत सुनते थे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

योग्य व्यक्तियों को शिक्षा दी जाती थी । दया, चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व का विकास, नागरिक एवं सामाजिक कर्त्तव्यों एवं दायित्वों का पालन, शिक्षा के लक्ष्य होते थे। शिक्षा के क्षेत्र में गुरुकुल प्रणाली का विशिष्ठ स्थान था। गुरु-शिष्य के संबंध मधुर थे। विविध विषयों में शिक्षा दी जाती थी । पाठ्यक्रम और उनकी अवधि का निर्धारण, विद्यार्थियों की इच्छा, सामर्थ्य और उनकी सुविधानुसार होता था। स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन दिया जाता था। अभिव्यक्ति का माध्यम प्राकृत भाषा थी । साहित्यिक गतिविधियां इस युग में खूब फली-फूली । शिल्पकला के विकास के फलस्वरूप ही भवनों, दुर्गों, जलाशयों, नहरों आदि का निर्माण संभव हो सका।

आर्थिक परिस्थितियाँ

ग्रामीण अर्थ व्यवस्था का केन्द्रबिन्दु ग्राम था । ग्रामीण जनता की आजीविका का मुख्य साधन खेती था । कृषि में नई-नई पद्धतियों का विकास हुआ । उस युग के साहित्यिक स्रोतों से ज्ञात होता है कि खेतों में हल चलाये जाते थे, खेतों की सीमा पर बाड़ लगाई जाती थी, बीज बोये जाते थे। खेतों में निन्दाई होती थी। फसल काटने और कटी हुई फसलों के गट्ठर बांधने का भी वर्णन मिलता है। कुओं और जलाशयों से सिंचाई होती थी । उज्जैन और वैशाली में पुरातत्व विभाग द्वारा जो खुदाई कार्य हुवा है वहां इनके भग्नावशेष प्राप्त हुवे हैं। खेती के लिये पशुओं में गाय, भैंस, बकरी, भेड़, गधे, ऊँट, सूअर और कुत्तों का उपयोग होता था। रुई, ऊन, चांवल, गेहूं, चना, सेम, नासपाती, अरण्डी, सरसों, शीशम, अदरक, लोंग, हल्दी, जीरा, मिर्ची व गन्ने की फसलें होती थीं। अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ फूल-फल और पान की खेती होती थी ।

जानवरों एवं पक्षियों से खड़ी फसल की रक्षा के लिये अनेक उपाय किये जाते थे। खेतों के अतिरिक्त कताई-बुनाई (मिट्टी के तकुए प्राप्त हुवे हैं), सुथारी, लुहारी आदि धंधों का विवरण उपलब्ध साहित्य में मिलता है। लोहे गलाने की भट्टियों का उल्लेख मिलता है तथा पुरातत्व खुदाई में लोहे की वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं। हाथी दांत पर काम, माला बनाना, इत्र बनाना आदि कार्य भी होते थे। गौंद, औषधियाँ, रसायन एवं रंगाई तथा चमड़े आदि के गृह उद्योग भी चलते थे। भवन निर्माण का कार्य खूब होता था।

विदेशों से एवं देश में व्यापार-व्यवसाय उन्नति पर था। सामुद्रिक व्यापार के भी प्रमाण मिलते हैं। बिरस-निर्मद के नेबुचन्द नेजर के राजमहल में भारतीय देवदारु की एक बल्ली मिली है। बावरू और सुपारक जातकों, दिध-निकाय और लंका के इतिहास में भी भारत के विदेशी व्यापार का वर्णन मिलता है, इस युग के आर्थिक जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना व्यापार और उद्योगों को श्रेणियों में संगठित करने की है। व्यापार में सिक्कों का प्रचलन दूसरी महत्वपूर्ण बात थी। इस युग के सिक्के भीर, पैला, पतराहा, मच्छाटोली आदि स्थानों में पाये गये हैं। कर्ज देने की प्रथा भी थी । पाणिनी ने विभिन्न माप-तौल का उल्लेख किया है। चिरद, वैशाली और एरन की खुदाइयों से भी उस युग के माप-तौलों की जानकारी मिली । बड़ी-बड़ी मण्डियों में वस्तुओं का क्रय-विक्रय होता था। मण्डियों में वस्तुओं के मूल्यों एवं मूल्य निर्धारण में होने वाली सौदेबाजी के भी संकेत मिलते हैं ।

धार्मिक परिस्थितियाँ

धार्मिक क्षेत्र में न केवल भारत में अपितु समस्त विश्व में क्रांतिकारी परिवर्तन हुए । महावीर का युग जनजागरण का युग कहलाता है । सभ्यता के विभिन्न केन्द्रों पर अचानक और एक साथ धार्मिक आन्दोलन चालू हुए । ईरान में जरुस्त्रम ने अद्वैत का उपदेश देकर धार्मिक क्रियाकाण्ड के विरुद्ध विद्रोह किया। यूनान में हेराक्लिटस और पाइथोगोरस ने पुनर्जन्म की चर्चा की और जनता को शुभ कार्य करने के लिये प्रोत्साहित किया । चीन में कन्फुसियस और लाओत्से ने प्रचलित धारणाओं के विपरीत नई विचार धारा प्रस्तुत की। बेबीलोन की अधीनता में रहे यहूदियों ने "यहौवा" में दृढ़ विश्वास प्रकट किया। भारत में ब्राह्मणवाद के विरुद्ध कई संसार से विरक्ति-वैराग्य संबंधी तथा अन्य बौद्धिक आन्दोलन उभरे, जिनमें बौद्ध एवं जैन अग्रणी थे। ईसा से छः शताब्दी पूर्व इन्होंने वही किया जो लूथर और कोल्विन ने ई० १९ वीं शताब्दी में किया। अहिंसा, अचौर्य, अपरिग्रह, सत्य आदि के उपदेश दिये जाने लगे । धार्मिक सहिष्णुता का आग्रह किया गया और मोक्ष प्राप्ति पर जोर दिया गया । प्रतिद्वन्द्वी विचारधाराओं एवं सम्प्रदायों के आपसी मतभेदों के फलस्वरूप जनता में आध्यात्मिक चेतना जाग्रत हुई । स्वर्ग और नरक में लोगों का विश्वास था और ऐसी मान्यता थी कि अच्छे कार्यों का फल स्वर्ग और बुरे कार्यों का फल नरक था ।

कला

साहित्यिक रचनाओं से ज्ञात होता है कि राजमहल राजधानी के मध्य में बनाया जाता था और उसके आसपास परकोटा होता था। उसमें महल दो मंजिला होता था और उसमें तीन आंगन होते थे। दीवालों और खंभों पर सुन्दर आकृतियाँ बनाई जाती थीं । भवन ईंट, पत्थर और लकड़ी के बने होते थे। भवनों में खिड़कियों, दरवाजों एवं बरामदों की व्यवस्था होती थी । शासकीय एवं अन्य भवनों के निर्माण में स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाता था । कहीं-कहीं देवकिलकों एवं चैत्यों का वर्णन मिलता है । पुरातत्व विभागों द्वारा विभिन्न स्थानों पर की गई खुदाई से "स्तूपों" के निर्माण पर प्रकाश पड़ता है । जैन सर्वतीर्थ संग्रह पुस्तक से ज्ञात होता है कि प्रद्योत ने उज्जैन, दशपुर एवं विदिशा में जीवन्त स्वामी (महावीर) की मूर्तियाँ स्थापित की थी । पुरातत्व विभाग की खोजों एवं साहित्यिक कृतियों से महावीर काल में बनी, मिट्टी व पकी हुई मिट्टी से बने बर्तनों का ज्ञान होता है। जैन एवं बौद्ध साहित्य से पता चलता है कि कला की दृष्टि से धार्मिक एवं अन्य चित्रकारी का बड़ा महत्व था। इस काल के चित्र पंचमड़ी की महादेव पहाड़ियों की गुफाओं में, भोपाल के पास भीम बैटका, मन्दसौर के पास मोरी, सिंघनपुरा, कबरा पहाड़, लिकुनिया, कोहवार, मेहरिदा, भालदारिया और मिरजापुर में बीजागढ़ तथा बांदा में मानिकपुर में पाये जाते हैं। कुछ धातु, हड्डी और पत्थर की वस्तुएं भी खुदाई से प्राप्त हुई हैं। मुद्राएं, मोहरों, रंग लगाने की कुम्हार की कूचियों, पत्थरों के मूसल, चक्की एवं तश्तरियों आदि प्राप्त वस्तुओं से उस युग की कला की झांकियां देखने को मिलती हैं । □

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org